eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 10, October 2025

भारतीय षोडश संस्कारों की वर्तमान समय में प्रांसगिकता

कु0 आँचल[1]
[1]शोधार्थिनी, संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्ययन संस्थान, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

Received: 25 Oct 2025 Accepted & Reviewed: 28 Oct 2025, Published: 31 Oct 2025

Abstract

आधुनिक समय में महत्वाकांक्षाओं की दौड़ में व्यक्ति समाज, संस्कृति व संस्कार से दूर चला गया है,वर्तमान समय में समाज में मूल्यों को संस्कार का नाम देते हैं, जिन मूल्यों के कारण मानव मूल्यवान होता है। किन्तु आज के परिवेश में नैतिक, सामाजिक तथा चारित्रिक मूल्यों का अभाव दिख रहा है। जिसके कारण समाज लक्ष्यहीन दिखता है। उदाहरण के लिए 50–100 वर्ष पूर्व जायें तो भारतीय संस्कृति का परिदृश्य स्पष्ट दिखता था,बड़ों के प्रति सम्मान, छोटों के प्रति स्नेह, वेशभूषा में शालीनता, वचन में मधुरता, विचारों में उदारता, सामूहिक परिवार, परोपकार जैसे मूल्यों के प्रति निष्ठावान, कर्तव्यनिष्ठा से युक्त अपने–अपने दायित्वों के प्रति सजग रहना एवं सुदृढ़ दिनचर्या के अनुसार अपने आप को ठीक रखते हुये दीन–दुखियों की मदद करना आदि इस प्रकार के नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों को समाहित करते हुए उस समय के समाज का परिदृश्य था। किन्तु उस संस्कृति और संस्कार का परिदृश्य आज कहीं खो सा गया है, विकासवाद, भौतिकवाद, तथा विज्ञानवाद समाज में धार्मिक मूल्यों का कोई स्थान नही शेष नहीं रहा है। जिसके कारण हमारे उत्तरवर्ती परंपरा विपरीत राह पर चल चुकी है। आज समाज में संस्कार विलुप्त हो चुके है। विनम्रता, दया, दक्षिणा का नाममात्र ही सुनाई देता है। आज छोटे बच्चे भी अमर्यादित संभाषण, अनुचित कुकृत्य करते है या यूँ कहा जाय कि लगभग कहीं न कहीं व्यक्ति उक्त क्रियाओं से ग्रस्त ही है, मुख्यतः इन पहलुवों के पीछे कारण क्या है? पश्चिमीकरण और आधुनिकीकरण, भौतिकवाद प्रस्तुत शोध का प्रतिपाद्य– षोडश संस्कारों की वर्तमान समय में प्रासंगिकता,संस्कार क्या है, हमारे जीवन में संस्कारो का होना कितना आवश्यक है, और इसका प्रयोजन क्या है, इसके पीछे का वैज्ञानिक महत्व क्या है, इत्यादि कारण परिणामो का विश्लेषण शामिल है।

मुख्य शब्द– षोडश संस्कार, भारतीय संस्कृति, सामाजिक मूल्य, नैतिक शिक्षा, जीवन चक्र, सांस्कृतिक परंपरा, आधुनिक समाज, व्यक्तित्व विकास

Introduction

'स्कन्द पुराण' का सर्वप्रसिद्ध श्लोक है 'जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात द्विजः उच्यते' जन्म से तो सभी मनुष्य शूद्र (सामान्य मनुष्य) होते है परन्तु संस्कारो से ही द्विज (परिमार्जित) होते है

संस्कार' शब्द की व्युत्पत्ति 'सम्' उपसर्गपूर्वक 'कृ' धातु से 'घ' प्रत्यय के योगमात्र संड्कार' बनकर पुनश्च 'सुट' आगम से "संस्कार" शब्द बना । सुडागम अत्यन्त महत्वपूर्ण है 'पा० शिक्षा के अनुसार 'भूषणार्थक' माना गया है। संस्कार' शब्द का मूल अर्थ -परिष्कृत, परिमार्जित या स्वभाव का शोधन है। यह अंग्रेजी के (सेक्रामेंट Sacrament) शब्द संस्कार के लिए प्रयुक्त होता है, जिसका अर्थ- 'धार्मिक-विधान' है दार्शनिक दृष्टिकोण से हमारे मनीषियों नें संस्कार को व्याख्यायित किया है – आचार्य चरक' के शब्दों में-"संस्कारो हि गुणान्तराधानमुच्यते " (चरकसंहिता,अ०1) अर्थात् पहले से विद्यमान दुर्गुणों के स्थान पर सद्गुणों का आधान ही संस्कार है। इसी प्रकार ज्ञान के अथाह सागर कहे जानें वाले आदिगुरु'

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 10, October 2025

शङ्कराचार्य' नें गुणाधान या दोषापनयन को संस्कार कहा है- "संस्कारो हि गुणाधानेन वास्य दोषापनयेन वा " (ब्रह्मसूत्रभाष्य 1/1/4) संस्कार शब्द का अर्थ अनेंको मतानुवायी अपनें देशकाल वातावरण के अनुसार अपने-अपने शब्दों में ढालने का प्रयत्न किया है जिसमें से 'मीमांसक' संस्कार शब्द का अर्थ यज्ञ के अंगभूत पुरोडाशादि की विधिवत् शुद्धि का संस्कार मानते है-'प्रोक्षणादिजन्य संस्कारी यज्ञांग पुरोडाशेष्विति द्रव्यधर्म: अर्थात चावल के आटें से तैयार की गयी हत्यादि द्रव्यों में जल के छीटें मारनें से उत्पन्न हुयी शुध्दि ही संस्कार है। 'अद्वैतवादी जीव पर शारीरिक क्रियाओं में मिथ्या आरोप संस्कार कहा है-'स्नानाचमनादिजन्याः संस्कारा देहे उत्पद्यमानानि तद्भिधानानि जीवे कलप्यन्ते' वही "नैयायिक" भावों को व्यक्त करनें की आत्म व्यंजक शाक्ति को संस्कार कहते है-'योग्यताञ्चा दधानाः क्रियाः संस्कारा इत्युच्यन्ते" (तन्त्रवार्तिक) इस प्रकार 'संस्कार' शब्द को विद्वानों नें अनेक प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया है, वस्तुतः जिस प्रकार स्वर्णकार कंटक-कुण्डल प्रभृति मनोवाञ्छित आभूषण निर्मित कर उसको नवीन रूपों में दालनें का प्रयास करता है, उसी प्रकार मनुष्य वंशानुक्रम से प्राप्त दुर्गुणों को निकालकर सद्गुणों की स्थापना का प्रयत्न ही 'संस्कार' है।संस्कारों का विस्तृत विवेचन 'गृह्यसूत्रों तथा 'स्मृति/धर्मशास्त्रों में उपलब्ध होता है, प्राप्त साहित्य में संस्कारों की संख्या - 10 से 40 तक देखी जाती है। प्रायः संस्कारों के संख्या के विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं है।

आश्वलायनगृह्यसूत्र - में संस्कारों की संख्या - (11) है,पराशर, बौधायन, वाराह गृह्यसूत्र – (13) वैखानस गृह्यसूत्र (18), गौतम धर्मसूत्र (40), मनुस्मृति (13), याज्ञवल्क्यस्मृति (12)

संख्या सम्बन्धी मतैक्य न होने पर प्रायः सभी धर्मशास्त्रकारी ने संस्कारों की संख्या (16) मानते है-(व्यासस्मृति) में महर्षि वेदव्यास' ने कुल से (16) संस्कारों उल्लेख किया है

“गर्भाधानंपुंसवनसीमन्तोजातकर्म च । नामक्रियानिष्क्रमणेअन्नप्राशन वपनक्रियाः कर्णवेधो व्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः।केशान्तस्नानमुद्वाहो विवाहाग्निपरिग्रहः।त्रेताग्निसंग्रहश्चेति संस्काराः षोडश स्मृताः।।"(व्यासस्मृति1/13-14)1.गर्भाधानसंस्कार 2.पुंसवनसंस्कार 3. सीमन्तोनयन संस्कार 5.जातकर्मसंस्कार 5. नामकरण संस्कार 6. निष्क्रमण संस्कार 7. अन्नप्राशन संस्कार 8. चूडाकर्म (मुण्डन) संस्कार 9. कर्णवेध संस्कार 10. विद्यारम्भ संस्कार11. उपनयन (यज्ञोपवित) संस्कार12. वेदारम्भ संस्कार13. केशान्त संस्कार 14. समावर्तन संस्कार 15. विवाह संस्कार 16. अन्त्येष्टि संस्कार

संख्या वैषम्य से प्रतीत होता है कि शास्त्रकारों ने अपने-अपने देशकाल-वातावरण में अति प्रचलित मान्यताओं को ही आधार बनाया होगा जिन्हें कि निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है

(1) प्राक्जन्म संस्कार-: 1. गर्भाधान 2. पुंसवन 3. सीमन्तोनयन

(2)बाल्यावस्थासंस्कार-:4.जातकर्म 5.नामकरण 6. निष्क्रमण 7.अन्नप्राशन 8.चुड़ाकर्म 9.कर्णवेधन

(3) शैक्षणिक संस्कार-: 10. विद्यारम्भ 11. उपनयन 12. वेदारम्भ 13. केशान्त 14. समावर्तन

(4) विवाह संस्कार-: 15. विवाह

(5) मृत्युपर्यन्त संस्कार -: 16. अन्त्येष्टि

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 10, October 2025

1. गर्भाधान संस्कार-: पर्याप्त खोजों के बाद चिकित्साशास्त्र भी इस निष्कर्ष पर पहुंचा है,गर्भाधान के समय स्त्री-पुरुष जिस भाव से भावित होते है, उसका प्रभाव उनके रज-वीर्य में भी पड़ता है।मानव का सम्पूर्ण जीवन संस्कारों का क्षेत्र है,जिससे योग्य गुणवान और आदर्श,आज्ञाकारी, सुन्दर, भाग्यशाली संतान के लिए गृहस्थ जीवन का प्रथमत: कर्तव्य गर्भाधान प्रकरण से आरम्भ होता है। गर्भसंस्कार विधि का शास्त्रों में विस्तृत वर्णन प्राप्त है। ऋग्वेद 10.184 सूक्त गर्भाधान विषयक मंत्रों से युक्त ऋषि अनेक देवताओं से गर्भाधान में सहायता हेतु प्रार्थना करता है- 'विष्णु गर्भाशय को तैयार करे, त्वष्टा गर्भ को स्थिर करे, प्रजापति उस गर्भ को अनुकूल द्रव से भरे, धाता और सरस्वती उसमें भ्रूण प्रतिष्ठित करे, अश्विनी कुमार उस गर्भ को नील-कमल -माला (नाल आदि) से सुसज्जित करे-"विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रुपाणी पिंशतु । आ सिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भ दधातु ते ।।" (ऋग्वेद-10.184)आज के गर्भ संस्कार गर्भधारण से लेकर प्रसूति तक के 9 महीनों में घटने वाली हर घटनाओं से जुड़े तथ्यों से है। गर्भवती स्त्री के विचार, उसकी मनोदशा, गर्भस्थ शिशु से संवाद, सुख, दु:ख, डर, संप्घर्ष, विलाप, भोजन, दवाएं, ज्ञान, अज्ञान तथा धर्म और अधर्म जैसे सभी विचार आने वाले शिशु के व्यवहार पर असर करते हैं।वस्तुतः गर्भाधान संस्कार प्रजनन विज्ञान, का आध्यात्मिक एवं सामाजिक स्थिति का मार्गदर्शन कराने वाला प्रशिक्षण ही है, जो संतति प्रक्रिया से जुड़े सभी पहलुओं का मार्गदर्शन करता है। महत्व की दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण संस्कार है। क्योंकि गृहस्थ धर्म की सबसे बड़ी शुरुआत है।

2. पुंसवन संस्कार-: यह संस्कार गर्भधारण के निश्चय हो जानें के पश्चात् शिशु को पुंसवन नामक संस्कार से अभिषिक्त किया जाता था। इसका अभिप्राय पुं-पुमान् (पुरूष) का सवन (जन्म हो) "पुमान् प्रसूयते येन कर्मणा तत् पुंसवनमीरितम् ” (वारमित्रोदय) 'आपस्तम्ब धर्मसूत्र के अनुसार -गर्भ धारणोपरान्त पुत्र प्राप्ति हेतु यह संस्कार किया जाता था-" पुंसवनमिति कर्मनामधेयं येन कर्मणा निमितेन गर्भिणी पुंमासमेष सूते सत्पुंसवनं (14.9)" गर्भ के तीसरे माह में पुंसवन संस्कार' मनाया जाता था इस अवसर पर पुत्र प्राप्ति हेतु-श्रत्चायें गायी जाती थीं तथा पुत्र प्रदान करने वाले देवताओं को प्रसन्न किया जाता था। श्रत्ग्वेद एवं अथर्ववेद में में श्रच्चायें बहुलता से प्राप्त होती हैं। इस संस्कार के लिये उपयुक्त समय भी निश्चित किया गया है। पुत्र प्राप्ति के लिये चन्द्रमा का पुण्य नक्षत्र में रहना शुभ माना गया है। अतः स्पष्ट है गर्भ के दूसरे तीसरे महीने में गर्भपात का खतरा होता है, विज्ञान के अनुसार गर्भ के 3 महिनें में भ्रूण आकार लेने लगता है। इसी के साथ गर्भ जीवित शिशु ज्ञान ग्रहण करने लगता है। पुंसवन संस्कार माध्यम से जब गर्भवती माता को सकारात्मक विचार के साथ सात्त्विक भोजन परंपरा अनुसार संस्कारों का प्रत्यारोपण किया जाता है। तब गर्भ में पल रही संतान की भी इसी के अंश प्राप्त होते है। जो पूर्णतः प्रमाणिक एवं प्रांसंगिक आज गर्भवती स्त्री में चिन्ता, तनाव, अनेक व्याधि इत्यादि की दृष्टि से आज भी इस संस्कार का विशेष महत्त्व है।

3. सीमन्तोन्नयन संस्कार- गर्भपात होना एक स्वभाविक प्रक्रिया है क्योंकि स्त्री का शरीर यदि भ्रूण के विकास के अनुरूप विकसित नहीं हो पाता। यदि गर्भवती स्त्री अपने स्वभाव में परिवर्तन नहीं ला पायी, तो गर्भपात हो जाता है। गर्भवती स्त्री को इस समस्या से निदान दिलाने के लिए यह संस्कार किया जाता है, इसमें स्त्री के उठने-बैठनें, चलने, सोने, उठने आदि की क्रिया समाहित होती है। जिसका अनुपालन करना प्रत्येक गर्भवती स्त्री के लिए आवश्यक होता है। आज मेडिकल साइन्स' ने इतनी प्रगति कर ली है जिससे कुछ अज्ञात रह ही नहीं गया है। आज विज्ञान भी वही बात करती है जो इस संस्कार में निहित है। गर्भकाल के 6, 8 महिने इस संस्कार विधान होता क्योंकि गर्भकाल यही वह महिना होता है. जब गर्भपात की अधिक संभावना होती है। इस संस्कार के फलस्वरूप गर्भ की सुरक्षा होती है याज्ञवल्क्य स्मृति' में कहा गया है- 'षष्ठे अष्टमे वा सीमन्तोमसि (1-11)इसी का समर्थन 'पारस्कर-गृह्यसूत्र' भी करता है- 'पुंसवनवत् प्रथमे गर्भ मासे

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 10, October 2025

षष्ठे अष्टमेववा' (1.15) यह संस्कार भी पुंसवन संस्कार की भाँति ही पुरुष नक्षत्र में स्त्री को उपवास कराकर स्नानोपरीत कोरे वस्त्र पहनाकर किया जाता था। 'पारस्कर गृह्यसूत्र' में वर्णित है कि इसमें तिल एवं बंग से स्थालीपाक पकाकर प्रजापति को आहुति दी जाती थी तथा आग्नि के पश्चिम में कोमल आसन पर बैठी पत्नी का पति 'ॐ भूर्भुवः स्वः बोलते हुये फलों से युक्त उदुम्बर वृक्ष की युग्म डंडी से तीन दर्भ के पवित्र से तीन श्वेत निशान बनानें वाले कांटे से तथा पूर्ण सूत्रवाले तकले से सीमान्त (मांग) निकालता था। बाद में मंत्रोचार सहित उदुम्बर की डंडी को स्त्री की चोटी में बाँध दिया जाता था। वेद मंत्र के साथ संस्कार सम्पन्न कराया जाता था। गर्भिणी स्त्री खिचड़ी की आहुति प्रजापत्य को देती थी। उपस्थित वृद्धाएं और श्रेष्ठ स्त्रियों उसे वीर पुत्र जन्म देनेवाली कहकर आर्शीवचन देती थीं- ॐ वीरसूस्तपं भव जीवसुतस्वं भव जीवपत्नी त्वं भव' (गौ० गृ०सू० 27-13) 'विष्णु-पुराण' में कहा गया है-" (3-13-6)सीमन्तोन्नयने चैव पुत्रादिसुखदर्शन नान्दीमुर्ख पितृगण पूजयेत्पत्यतो गृट्टी अर्थात् नान्दीमुष नामक पितरों (पूर्ववर्ती तीन पितरों) की पूजा करनी चाहिए सीमन्तोन्नयन संस्कार का उपर्युक्त विधी-विधान स्त्री को सम्मान, ऐश्वर्य, सुख एवं गर्भस्थ शिशु को स्वस्थ एवं दीर्घायु बनाता था। इसीलिए गर्भजन्य संस्कार में मंत्रोच्चारण शास्त्र अध्ययन करने की बात का समर्थन करता है।

4. जातकर्म संस्कार : यह संस्कार शिशु के जन्म होते ही इस संस्कार द्वारा गर्भवस्त्रावजन्य संबंधी सभी दोष दूर किये जाते थे। जिससे अनिष्टकारी प्रभाव बच्चे का पीड़ित न कर सके। 'मनु' के अनुसार यह संस्कार नाभिद्देदन से पूर्व किया जाता है-'प्राङ्गनाभिवर्धनात्पुंसो जातकर्म विधीयते ।

मन्त्रवत्प्राशनं चास्य हिरण्यमधुसर्पिषाम्।। (मनुस्मृति दि० अ० 29) जातकर्म संस्कार नवजात शिशु के जन्म के पश्चात् यह संस्कार नाल छेदन व गर्भवस्त्राजन्य संबंधी दोष को दूर करने करने के पश्चात् इस संस्कार का विधान किया जाता है। इस दैवी जगत् से प्रत्यक्ष सम्पर्क में आने वाले बालक की मेधा, बल एवं दीर्घायु के लिए स्वर्ण चम्मच से मधु एवं घृत वैदिक मंत्रों के उच्चारण के साथ चटाया जाता है। इस संस्कार के बाद ही माँ बच्चें का स्तनपान कराती है। स्तनपान विज्ञान के अनुसार जन्म के 30 मिनट के अन्दर बच्चे को स्तनपान कराना चाहिए ।जबकि संस्कार के अन्तर्गत हजारों वर्ष पूर्व ही इस बात को बताया जा चूका है मधु (शहद) का उपयोग औषधियों के निर्माण में तथा सेवन में किया जाता है। मधु के सेवन से तीव्र बुध्दि होती है तथा स्मरण शक्ति तेज होती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी यह उत्तम है क्योंकि इसमें कई विटामिन पायें जाते हैं, जो स्वास्थ्यवर्धक होते हैंआज के समय में भले ही इस संस्कार को शास्त्रीय विधि से न किया जाय, वस्तुतः शिशु जन्म पश्चात् स्तनपान, मधु इत्यादि का सेवन, और बच्चे के जन्म होने पर जातक के घर हर्षोल्लास सेगीत आदि का आयोजन बड़े धुमधाम से किया जाता है। जातकर्म संस्कार का वैज्ञानिक और सामाजिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भले ही इसके स्वरूप में परिवर्तन देखने को मिला है।

5. नामकरण संस्कार- यह संस्कार शास्त्रोक्त या सामान्य क्रियाव्यवहार का एक महत्त्वपूर्ण संस्कार मानना चाहिए, क्योंकि किसी भी वस्तु, प्राणि का नामधेय ही उसके अस्तित्व पहचान उसके गुण का प्रमाण होता है। हिन्दू समाज में नामकरण संस्कार को अधिक महत्व दिया जाता है, आज भी यह संस्कार बड़े धूम-धाम से सम्पन्न होता है। 'मनु' के अनुसार जन्म के 10 या 12 वें० दिन शुभ तिथि, नक्षत्र और मुहुर्त में इस संस्कार का आयोजन करना चाहिए- 'नामधेयं दशम्या तु द्वादश्यां वास्य कारयेत् । पुण्ये तिथौ मुहुर्त वा नक्षत्रे वा गुणान्विते ॥(मनुस्मृति २/30) शास्त्रोक्त विधि-विधान द्वारा उसके सुख-समृध्दि की कामना करते हुये, ऐसे नाम का वरण किया जाता है जिससे उसके व्यक्तित्व की पहचान हो- "आयुर्वचौअभिवृध्दिश्च सिध्दिव्यहारतेस्तथा नामकर्मफलं त्वेतत् समुद्दिष्टं मनीषिभिः ।" (स्मृतिसंग्रह)

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 10, October 2025

नामकरण के संबंध में मनुस्मृति,ज्योतिष शास्त्र में विशेष वर्ण तथा लिंग के अनुसार नामकरण निश्चित किया गया है.किन्तु वर्तमान समय में ये शास्त्रोक्त नियम के विपरीत भी अनेकानेक जन अपने नाम को सार्थक और निर्थक सिद्ध कर रहे है

6. निष्क्रमण संस्कार- घर से प्रथम बार बाहर ले जानें के पूर्व इस संस्कार को किया जाता है। यह शिशु जन्म के 4,6वे०माह में किया जाता है 'चतुर्थे मासि कर्तव्यं शिशोनिष्क्रमण गृहात् (मनु०/2.34) आह में किया जाता है, सूर्य तथा देवी-देवताओं की पूजा व दर्शन कराकर सभी दोषों से मुक्ति का आशीर्वाद दिलाकर बाहर के वातावरण से अवगत कराया जाता है सूर्य का दर्शन तीसरे माह एवं चन्द्रमा का दर्शन चौथे माह का उल्लेख मिलता है- "ततस्त्वलंकृता धात्री बालकाद्वाय पूजितम् । बहिर्निष्कासयेद् गेहात् शङ्ख पुण्याहनिःस्वनैः ।।" (विष्णुधर्मोत्तर) नवजात शिशु में रोग प्रतिरोधक क्षमता क्षीण होती पारिवारिक है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है उसमें प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है तब उसे वातावरण अथवा प्रसुति कक्ष से बाहर लाया जाता है। इसी अवसर पर निष्क्रमण संस्कार होता है।

7. अन्नप्राशन संस्कार-: जब शिशु 6 माह का हो होता है और उसके दाँत निकलने लगते है, पाचन शक्ति तेज होने लगती है,बच्चे का शरीर जैसे विकसित होता है, उसे अधिक उर्जा की आवश्यकता होती है, जो माँ के दूध से पर्याप्त नहीं होता है। अतएव 5,6 महिने में बच्चे का अन्न देना जरूरी हो जाता है। अतः अन्नप्राशन संस्कार द्वारा बच्चे को प्रथम बार अन्न ग्रहण करवाया जाता है। शिशु के दांत निकलने पर प्रथम बार अन्न खिलानें को "प्राशित" कहा जाता था। वेदों व उपनिषदों में एतत् सम्बधी मंत्र उपलब्ध होते है, प्राचीन काल से ही एक विशेष उत्सव के रूप में सम्पन्न किया जाता था-जन्मतोमासि षष्ठे स्यात सौरैणोत्तमन्नदम् तदभावेऽष्टमे मासे नवमे दशमेअपि वा।. द्वादशे वापि कुर्वीत प्रथमान्नाशनं परम् संवत्सरे वा सम्पूर्ण केचिदिच्छन्ति पण्डिता ।। (वीरमित्रोदय) जन्म के 6वे० मास-षष्ठेन्नप्राशनं मासि (मनु02/34) था, 8 वे०, 9,10,12 वे० मास में शुभ मुहुर्त मंत्रोक्त विधि से अन्न इत्यादि ग्रहण करवाया जाय । अतः 'सुश्रुत' नै वैज्ञानिक पध्दति से शिशु को 6वे० महिने में थोड़ा और हितकारी अन्न खिलाया जाना चाहिए- 'षण्मासञ्चैनमन्न प्राशयेल्लघुहितञ्च' इसलिए अन्नप्राशन में दूध में पकाया हुआ खीर खिलाया जाता है

8. मुण्डन (चुड़ाकर्म) संस्कार-: शिशु की उम्र के पहले वर्ष के अन्त में या 3,5,7, वें ० वर्ष के पूर्णता पर बच्चे के बाल को उतारा जाता है, जिसे चुड़ाकर्म या आधुनिक शब्दावली में मुण्डन संस्कार कहा जाता है। रूप से पहले या तीसरे वर्ष में कराया जाना चाहिए-'चूड़ाकर्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मतः ।प्रथमाब्दे तृतीये वा कर्तव्यं श्रुतिचोदनात्'।। (मनु 2/35) 'पा० गृ०सू० (119) के अनुसार यह संस्कार जन्म के प्रथम, तीसरे, पाँचवें या सातवें वर्ष की समाप्ति के पहले करना चाहिए इस संस्कार का प्रयोजन शिशु का बल, आयु व तेज की वृद्धि करना है।आचार्य सुश्रुत ने हजारो वर्ष पूर्व इस संस्कार की वैज्ञानिकता के बारे उल्लेख कियाहै- मस्तिष्क के अंदर व ऊपर भाग में शिखा एवं संधि का सन्निपात होता है इस अंग पर आघात अकाल मृत्यु का कारण बन सकता है इसलिए शिखा (चोटी) रखने का विधान है, किन्तु कालक्रम में यह शिखा जातिविशिष्ट का वाचक मात्र रह गया है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 10, October 2025

9. कर्णवेध संस्कार-: इस परम्परा के अन्तर्गत शिशु के कान छेदें जाते हैं। इसलिए इसे कर्णवेधन संस्कार कहा जाता है। यह संस्कार जन्म के 10 माह से 5 वर्ष तक की आयु के बीच किया जाता था। मान्यतानुसार सूर्य की किरणें कानों के छेदों से होकर बालक-बालिका को पवित्र करती है और तेज संपन्न न्बनाती है। जिससे बच्चे का मस्तिष्क एकाग्र होता है। शास्त्रों में यहाँ तक वर्णन है कि जिसके कान न छिदे हो वह पुरुष श्राध्द का अधिकारी नहीं माना गया है।आधुनिक एक्यूपंचर पद्धति का सशक्त माध्यम भी है,अनुसंधान में पाया गया है स्वर्ण धातु कानों में धारण करने से स्त्रियों में मासिक धर्म नियमित रहता है,इससे हिस्टीरिया रोग में भी लाभ मिलता है। किंचित परिवर्तन के बाद भी यह संस्कार हमारे जीवन का प्रमुख अंग है।

10. विद्यारम्भ संस्कार-: जब बालक का मस्तिष्क शिक्षा ग्रहण करने योग्य हो जाता है, तत्व विद्यारम्भ संस्कार कराया जाता था। यह संस्कार वस्तुतः अक्षरारम्भ संस्कार था। संतान के जन्म के पांचवें वर्ष एवं शुभ उपनयन से पूर्व यह संस्कार सम्पादित किया जाता शुभ मुहूर्त में शिक्षक द्वारा पट्टी पर 'ओइम्' और 'स्वस्तिक' के साथ वर्णमाला लिखकर बालक को अक्षरारम्भ कराया जाता था। इसमें गणपति पूजन, सरस्वती पूजन अथवा गृह देवता को पूजा जाता था। इसके साथ यज्ञ भी होता था. जिसमें पूर्वाभिमुख बच्चे को रखकर अक्षर का आरम्भ करवाया जाता था। तदनन्तर गुरु को वस्त्र, धन, आभूषण आदि भेंट में प्रदान किया जाता था। वस्तुतः यह संस्कार बुद्धि एवं ज्ञान का संस्कार था। बालक को मानसिक तौर पर सबल एवं सशक्त बनाने के लिये ही यह संस्कार सम्पन्न कराया जाता था, क्योंकि उपनयन के बाद गुरु के समक्ष रहकर ही अध्ययन करता था इस लिए बालक के अंदर उत्साह बना रहे। 'मारकण्डेय पुराण' तथा 'विश्वामित्र' के अनुसार यह संस्कार बालक की आयु के 5 वें वर्ष में किया जाना चाहिए। यह संस्कार एक सांस्कृतिक संस्कार है और इसका उद्भव उस समय हुआ होगा जब वर्णमाला का विकास हो चुका होगा। यद्यपि कर्म की दृष्टि से विधारम्भसंस्कार उपनयन के पूर्व आता है, परन्तु उद्भव की दृष्टि से यह संस्कार उपनयन की अपेक्षा बाद का है।

11. उपनयन संस्कार-: उपनयन शब्द 'उप' उपसर्गपूर्वक नी धातु एवं ल्युट् प्रत्यय से मिलकर बना है जिसका अर्थ है- 'निकट ले जाना', उपनयन का अभिप्राय स्वाध्याय अथवा वेद के अध्ययन से है, जब बालक अध्ययनार्थ आचार्य के समीप जाता 'गृहयोक्तकर्मणा येन समीपं नीयते गुरोः बालो वेदाय तद्योगात्बालस्योपनयनं विदुः।' पुनः यज्ञ के उपवीत के रूप में अर्थात् यज्ञोपवीत के रूप में उपनयन संस्कार होने लगा मनुस्मृति (2/41.42.43.45.49) में क्रमशः वर्णानुसार ब्रह्मचारी के कर्तव्यों, वस्त्र,दंड,जनेऊ,मेखला का वर्णन है,यज्ञोपवीत(जनेऊ) 3 सूत्र में (ब्रह्मा विष्णु महेश), (सत्व,रज, तम) (पितृऋण,ऋषिऋण देवऋण) के प्रतीक जनेऊ को धारण करवाया जाता था, जिससे बालक गायत्री मंत्र का अधिकारी हो सके। जनेऊ धारण के पीछे एक बहुत बड़ा वैज्ञानिक कारण भी है यज्ञोपवीत दाहिने कान पर लपेटने से हार्निया रोग से राहत मिलता है,और गायत्री मंत्र के जप से प्रति सेकेंड १,१०,००० ध्वनि तरंगे उत्पन्न होता है जो मानसिक चिंतांओं से मुक्ति मिलती है गायत्री मन्त्र दुनिया का सबसे शक्तिशाली मंत्र है।

12. वेदारम्भ संस्कार-: उपनयन संस्कार के पश्चात् बालक को वेदाध्ययन का अधिकार प्राप्त हो जाता है, तत्पश्चात् शुभ मुहूत में बालक की शिक्षा प्रारम्भ की जाती है. इसका मूल उद्देश्य ज्ञानार्जन द्वारा व्यक्तित्व का परिमार्जन करना है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 10, October 2025

13. केशान्त संस्कार-: वेदाध्ययन काल में शुरुकुल में रहते हुये 'वेदों का अध्ययन करते हुये बालक उस समय वह ब्रह्मचर्य का पालन करता गुरुकुल से अध्ययन पूर्ण कर जब गृहस्थाश्रम में प्रवेश का उपक्रम आता है तब इसके केशों इत्यादि का अवसान किया जाता था।

14.समावर्तन संस्कार-: १-२५ वर्ष का समय ऐसा समय होता है जिसमे बालक को जो सङ्गति मिलती है उसी के अनुरूप ढलता है, ४ -५ वर्ष के बालक की अनुकरण क्षमता तीव्र होती है। २५वर्ष मनुष्य के ब्रम्हचर्यआश्रम बाद के १०० वर्षो का आधारस्तम्भ होता है। केशान्त इत्यादि क्रियाओं का पूर्ण करके ब्रह्मचारी बालक को समावर्तन संस्कार के अन्तर्गत वेदमंत्रों से अभिमंत्रित 8 कलश के जल से विधिपूर्वक' स्नान करवाया जाता है तत्पश्चात् ब्रहमचारी बालक को मेखला, दण्ड इत्यादि को त्याग देता है तत्पश्चात् आचार्य द्वारा स्नातक की उपाधि दिया जाता और आचार्य "सत्यं वद। धर्मं चर। स्वध्यायान्मा प्रमदः।"..... (तैत्तरीयोपनिषद,शिक्षावल्ली,अनु-11) इस उपाधि से वह सगर्व गृहस्थाश्रम में प्रवेश का अधिकारी समझा जाता था गुरूजनों से आशीर्वाद ग्रहण कर अपने घर के लिये विदा होता था।वर्तमान स्वररूपानुसार शिक्षा ग्रहण कर रहे किन्तु आज भी कॉलेजों,में दीक्षान्तसमारोह जैसे आयोजनों में इन संस्कारो का अंशतः अनुकरण कर ही रहे है।

15. विवाह संस्कार-: 'प्रजनार्थ स्त्रियः सृष्टाःसन्तानर्थकञ्च मानवाः।तस्मात्साधारणी धर्मः श्रुतौ पल्या सहोदितः ।। (मनु १/९६) मनु इसे 'नित्यलोक यात्रा कहते है- 'एषोदिता लोकयात्रा नित्यं स्त्री पुंसयोः शुभाः (9/25) प्राचीन काल से ही स्त्री और पुरुष के लिए यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्कार है। यज्ञोपवीत से समावर्तन संस्कार तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना हमारे शास्त्रों में विधान है। वेदाध्ययन के बाद जब युवक में सामाजिक परम्परा का निर्वाह करने की क्षमता, परिपक्वता आ जाती है तब उसे गृहस्थ धर्म में' प्रवेश' कराया जाता था । लगभग 25 वर्ष तक ब्रह्मचर्य का व्रत पालन करनें के बाद युवक परिणय सूत्र में बंधता था। सनातन धर्म में' जन्म-जन्मान्तर तक पति-पत्नी साथ रहकर धर्म पूर्वक जीवन यापन करते करते हुये संतति प्रक्रिया को समुन्नत कर पितृ इत्यादि ऋण से मुक्त होकर स्वर्ग के भागी बनते है. तैत्तिरीयसंहिता' में-"जायमानो ह वै ब्राहमणस्त्रिभिऋणवां जायते ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन दैवेभ्यः प्रजया पितृभ्यः । एष वा अनृणे यः पुत्री यज्वा ब्रह्मचारिवासी (6/3/10/15)और भारतीय समाज में इसका विशेष महत्व है।धर्मसूत्रों और स्मृतियों में विवाह के विधि विधानों की विस्तृत चर्चा है, आश्रम पद्धति में गृहस्थाश्रम को सभी आश्रमों का मूल माना गया है।

16.अन्त्येष्टि संस्कार-: यह अन्तिम संस्कार है, जिसे मनुष्य की मृत्यु के बाद किया जाता है। इस संस्कार का उद्देश्य मृत व्यक्ति की परलोक में शान्ति प्राप्त करने की कामना है। 'बौधायन' कहते हैं कि-जन्म के बाद संस्कारों से मनुष्य इस लोक को विजित करता है, तथा मृत्यु के बाद संस्कार से परलोक की विजित करता है।मत्स्यपुराण में अंत्येष्टि के 3 प्रकार बताये है, मृत्यु के बाद मृतक का क्या होता है? इसे कोई नहीं जानता शस्त्रों में स्वर्ग -नर्क, पुनर्जन्म की अवधारणा, जिसका प्रयोजन धर्मपूर्वक कर्म करने की प्रेरणा मात्र है, पञ्चतत्वों से निर्मित शरीर को शवदाह इत्यादि के माध्यम से सांसारिक मोह की दृष्टि भावनात्मक पक्ष बहुत मत्वपूर्ण तथा इस संस्कार से शरीर के वैक्टीरिया,वायरस न फैले इस दृष्टि से वर्त्तमान समय में प्रासंगिक,वैज्ञानिक संस्कार है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 10, October 2025

उपसंहार-: भारतीय मनीषियों ने मनुष्य व समाज के उत्थान के निमित्त षोडश संस्कारों की विद्या का सृजन किया। संस्कारों के विभिन्न क्रमिक रूप मनुष्य के जन्म से पहले ही प्रारम्भ होकर उसकी मृत्यु के पश्चात् तक निरन्तर बनें रहते हैं। यह पूर्णतः सत्य है कि मनुष्य का जन्म तो सहज है परन्तु मनुष्यता उसे कठिनता से प्राप्त करनी पड़ती है। मनुष्य के कर्मों को निर्धारित करते हैं उसके 'संस्कार' जिनकी पुष्टि गृह्यसूत्र, धर्मसूत्रों एवं स्मृतिग्रंथों से होती है। इनमें से अधिकांश संस्कार मात्र द्विजों के लिये विहित थी, जो कालान्तर में द्विजों के संकुचित अर्थ 'ब्राह्मण' वर्ण के लिये विहित रह गये। स्त्रियों को अधिकांश संस्कारों से वंचित रखा गया। स्वामी दयानन्द सरस्वती नै हिदू धर्म की इन कुरीतियों को नयी दिशा प्रदान की और सभी संस्कार संम्पूर्ण मनुष्य के लिए करणीय हो गये। मनोविश्लेषण एवं समाजशास्त्रीय विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है, मनुष्य अपनी स्थिति को सुदृढ़ एवं उत्थान की ओर ले जाने के लिए इन संस्कारों से बंधा हुआ था, जिससे उसकी सामाजिक परिधी भी विस्तृत होती थी। चूंकि प्रारम्भिक काल में व्यक्ति के कार्य के अनुसार वर्णविभाजन था, सभी वर्ण के लोग आपसी समन्वय से धर्म, संस्कृति की स्थापना किये थे। परन्तु धीरे-धीरे ये स्वधर्म रुढ़ियों में परिवर्तित हो गयी। हिन्दू धर्म में बाद के समय में जो विसंगतियाँ दिखाई देती है वह इस धर्म के लोगों के वैचारिकी और मानसिक पतन के परिणामस्वरूप है। धर्म जब आडम्बर का रूप लेता है तो उसका हास होना निश्चित हो जाता है, इसलिए इस धर्म के अधिकांश लोगों नें धर्म को त्यागना प्रारम्भ कर दिया। कालान्तर में शूद्रों, स्त्रियों को संस्कारों से वंचित रखा गया, उसका बृदह परिणाम आज का समाज भुगत रहा है, और यही वजहें हमारे संस्कृति की जड़ें कमजोर करती गयी। किसी भी समाज में शिक्षित, संस्कारित, सभ्य वर्ग ही समाज की दशा और दिशा दोनों बदलता है, ऐसे में खासकर उस समाज के लोग जिन्हें मूलभूत सुविधाओं संस्कारों , शिक्षा से वंचित रखा गया इसके पीछे धार्मिक मान्यताएँ, व्यवस्थायें अधिक कारण रही है। हालाँकि इन प्रथाओं को समाज अस्वीकारनें लगा तब 'स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजा राम मोहन रॉय, विवेकानन्द, सावित्री बाई फुले, अम्बेडकर जैसे महानुभावों में इन कुरीतियों को समय पर नई दिशा प्रदान कीये ।आधुनिक परिप्रेक्ष्य में संस्कारों का प्रचलन मंद पड़ने लगा है; मात्र आवश्यक संस्कार ही हमारे जीवन के अंग बने हुये हैं,वर्तमान समय में सभ्य समाज के निर्माण के लिए पुनः संस्कार से ही मनुष्य में मनुष्यवत्व स्थापित होगा

संदर्भ ग्रंथसूची-

1. मनुस्मृति, पं० हरिगोविन्द शास्त्री, चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी 1953.

2 . भारतीय संस्कृति ,डॉ दीपक कुमार / डॉ उमाशंकरशर्मा ऋषि,चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी 2018

3. भारतीय दर्शन एवं संस्कृति,डॉमहराजदीन पाण्डेय/डॉ अराधना,भारतीयविद्या संस्थान वाराणसी 2012

4 .प्राचीन भारतीय इतिहास, सौरभ चौबे,यूनिवर्सल बुक्स,2021

5 . व्यास स्मृति ,डॉ राधेश्याम शुक्ला, प्रतिभा प्रकाशन

6 . भारतीय संस्कृति में षोडश संस्कारों की वैज्ञानिकता, वायुनन्दन पाण्डेय

7 . भारतीय संस्कृति की वैज्ञानिकता-डॉ फणीन्द्र कुमार मिश्र

8 . वैदिक साहित्य एवं संस्कृति,-कपिल देव द्विवेदी,विश्विद्यालय प्रकाशन 2018

9 . वैदिक साहित्य एवं संस्कृति,बलदेव उपाध्याय, शारदा मंदिर, वाराणसी,2010

10 .संस्कृत साहित्य का इतिहास ,वाचस्पति गैरोला,चौखम्भा विद्याभवन वाराणसी,1967

11.षोडश संस्कार विवेचन,श्रीराम शर्मा आचार्य,युगनिर्माण योजना शांतिकुंज

12.संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास,कपिलदेव द्विवेदी,विश्वभारतीअनुसंधानसंस्थान 2020

13 .वीरमित्रोदय - संस्कार प्रकाश, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन

14. तैत्तरीयोपनिषद् गीता प्रेस गोरखपुर

15. स्मृतिसंग्रह,डॉ राधेश्याम शुक्ल

16. हिन्दू संस्कार, डॉ राजबली पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास 1987

17 . संस्कारचंद्रिका,

18, ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य ,स्वामीसत्यानन्द सरस्वती,चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान,2016